Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 01, January-June, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

कला, सौन्दर्य एवं संगीत

DR. SANGEETA

Associate Professor, Dev Samaj College for Women, Ferozepur City

संक्षेपिका

कला अपने मूल में अखण्ड अभिव्यक्ति है, क्योंकि कला किसी भी प्रकार की हो, उसका सौन्दर्य सदैव आनन्द प्रदाता होता है। कलाकार, कलाकृति तथा श्रोता अथवा दर्शक-इन तीनों के समन्वित रूप में ही सौन्दर्य निहित है। सौन्दर्य अनुभूति का विषय है, जो देश-काल की सीमाओं एवं बन्धनों से रहित होकर, मानव हृदय को आह्लादित करता है। संगीतकला, सौन्दर्योपासना का सजीव प्रतीक एवं अमर माध्यम है। सौन्दर्य शब्द का प्रयोग जितना सामान्य एवं व्यापक है, उसका अर्थ उतना ही अधिक रहस्यपूर्ण एवं विवादास्पद है। सौन्दर्य काल, देश, व्यक्ति एवं परम्परा से निर्मित होता है तथा इसका एक स्पष्ट गुण सुख है। सौन्दर्य के लक्ष्यों को सम्मुख रखकर ही, कलाकार कला का सृजन करता है। सौन्दर्य एवं निर्मातृत्व कला के महत्त्वपूर्ण अंग एवं लक्षण हैं। 'सौन्दर्य' देश, काल, जाति, भाषा इत्यादि बन्धनों से रहित होकर मानव-मन को उद्वेलित करने की प्रबल क्षमता रखता है। सौन्दर्य का स्वरूप चाहे जैसा भी हो, उससे आनन्द की उपलब्धि होती है। इसी आनन्द की अभिव्यक्ति करना ही कला का लक्ष्य है। अतः एव अनुभूत सौन्दर्य के सजीव पुनर्विधान को ही कला की संज्ञा देना समीचीन है। 'सौन्दर्य' की मूलभूत प्रेरणा से ही कला का विकास हुआ है।

मुख्य शब्द - कला, आनन्द, सौन्दर्य, अभिव्यक्ति, कलाकार।

भूमिका

कला, सच्चे अर्थों में मानव-जाति और सत्य के बीच की कड़ी है। संसार की जितनी भी महान और अमर कलाकृतियां है, वे सब वास्तविकता का ही प्रतिबिम्ब हैं, जिन्हें कलाकार की प्रतिभा ने संवार-सुधारकर प्रस्तुत किया है। कला का संसार, सामाजिक भावना का संसार है, स्वरों शब्दों और चित्रों का संसार है, जिसका निर्माण किसी एक के नही अपितु समस्त जन के भावात्मक सम्पर्क और जीवनानुभव के फलस्वरूप होता है। भारतीय जीवन में कला को सत्य, शाश्वत, नित्य एवं अनादि माना गया है। उसकी अराधना, लोकमंगल और परमार्थ दोनों के लिए की गई है। कला एक कृति है, कलाकार की अभिव्यक्ति है। यह सृष्टि भी उस परम सत्तावान् कलाकार की कृति या अभिव्यक्ति है। इसी भाव को लक्ष्य करके, छान्दोग्य उपनिषद (4.08.03) में लिखा गया है कि उस आयतवान् कलापुरूष परमेश्वर का प्राण कला है, चक्षु कला है, श्रोत्र कला है और मन भी कला है। यह सृष्टिकला त्रिविध रूपा है। उसके प्रतीक हैं-'सत्यम्', शिवम् और 'सुन्दरम'। इन तीनों के सम्मिश्रण से एक उच्चकोटि के सौन्दर्य की निर्मिति होती है, जो कला का सौन्दर्य कहलाता है। कला से प्राप्त आनन्द आद्यन्त आनन्द है जो कि कलाओं के आस्वादन का परिणाम है। इसी का चरमोत्कर्ष रस कहलाता है। रस को प्राप्त कर, प्राप्तकर्ता वास्तव में आनन्दवान् सिद्ध होता है:

व्युत्पत्तिगत अर्थ

हिन्दी शब्द 'सौन्दर्यशास्त्र' वस्तुतः एस्थेटिक्स के पर्यायवाची के रूप में प्रचलित है। पाश्चात्य चिन्तन-परम्परा में एस्थेटिक्स का व्यवहार दर्शन-शास्त्र की एक शाखा के रूप में चिरकाल से होता रहा है, परन्तु सर्वप्रथम बाउमगार्तेन (सन् 1714-62 ई.) ने इसका प्रयोग, आधुनिक अर्थ में किया था। बाउमगार्तेन ने 'एस्थेटिक' शब्द का ही प्रयोग किया था, जो बाद में 'एस्थेटिक्स' होकर प्रचलित हुआ और हो रहा है। मूलतः 'एस्थेटिक्स' शब्द से आया है, जिसका अर्थ है इन्द्रिय-ज्ञान। इस व्युत्पत्ति से 'एस्थेटिक्स' का वह अर्थ व्युत्पन्न नहीं होता, जो आज मान्य है। समस्त ललित कलाओं के दर्शन के रूप में 'एस्थेटिक्स' को प्रतिष्ठित करने का श्रेय हीगेल (सन् 1770-1831 ई.) को दिया जाता है।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 01, January-June, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

पृष्ठभूमि

18 वीं शताब्दी से पूर्व 'सौन्दर्यशास्त्र' नाम के किसी विशिष्ट विषय का अस्तित्व नहीं था। कलागत सौन्दर्य की मीमांसा, दर्शन एवं काव्यशास्त्र के अंतर्गत ही होती थी। भारत मे भी इस प्रकार के किसी स्वतन्त्र विषय का अस्तित्व आधुनिक युग की ही देन है। 'सौन्दर्यशास्त्र' के अन्तर्गत मुख्यतः कलागत सौन्दर्य की मीमांसा होती है। भारतीय ललित कलाओं संगीत एवं नाटक का आधारभूत ग्रन्थ भरतमुनि कृत 'नाट्यशास्त्र' माना गया है। 'नाट्यशास्त्र' विषयवस्तु की व्यापकता एवं विवेचन की गम्भीरता की दृष्टि से इतना महत्त्वपूर्ण है कि यादि उसका नाम 'नाट्शास्त्र' के स्थान पर, एक विद्वान् के अनुसार, 'सौन्दर्यशास्त्र भी रख दिया जाए, तो अनुचित नही होगा। एक तो 'नाट्यशास्त्र' का सर्वप्रमुख विवेच्य तत्त्व 'रस' है, जिसका सम्बन्ध संवेदनाओं एवं भावानुभूतियों से है। उधर सौन्दर्यशास्त्र का भी मूल अर्थ सम्वेदनाओं का विवेचन करने वाला शास्त्र है। दूसरे, नाट्यशास्त्र में न केवल नाटक और कविता का अपितु वास्तुकला, चित्रकला, संगीत, नृत्य आदि का भी विवेचन है। इस दृष्टि से भी यह 'सौन्दर्यशास्त्र' की सी व्यापकता का परिचायक है। तीसरे, इसमें कलाओं की प्रेरणा, प्रयोजन, लक्ष्य, मूलाधार आदि के सम्बन्ध में ऐसे संकेत दिये गये हैं, जिनके आधार पर सौन्दर्यशास्त्र के सामान्य सिद्धान्तों की स्थापना की जा सकती है।

समन्वय

वास्तव में कलाकार, कलाकृति तथा श्रोता अथवा दर्शक-इन तीनों के समन्वित रूप में ही सौन्दर्य निहित है। सौन्दर्योपासना का सर्वाधिक सजीव, सशक्त एवं अमर माध्यम संगीतकला है, क्योंकि मानवीय कलात्मक अनुभूतियों के संरक्षण एवं परिवर्द्धन में इस कला की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण है। संगीतकला स्वर, ताल एवं लय के सन्तुलित सम्मिश्रण की मधुर एवं सुरीली रचना है, जो प्राणी-मात्र के चित्त को पूर्णतया आनन्दित करती है।

किसी भी कला की अभिव्यक्ति अपने लिए नहीं, अपितु परमार्थ होती है, क्योंकि अभिव्यक्ति का भाव ही दूसरों के लिए है। इसी व्यक्त करने की प्रक्रिया से ही सौन्दर्य की सृष्टि होती है। किसी भी कलाकार से अभिव्यक्तिकरण में कठोर नियमों की पालना की अपेक्षा करना समुचित नहीं है, क्योंकि इससे उसकी कला में नीरसता का समावेश हो जाता है। किसी भी कला में सौन्दर्योत्पादन की दृष्टि से नियमबद्धता एवं स्वच्छन्दता का सामाजस्य नितान्तावश्यक है। संगीतात्मक ध्वनियों की मधुरता मानव को सहज ही आकर्षित कर लेती है, परन्तु भारतीय-चिन्तकों के अनुसार, किसी भी वस्तु का आकर्षण उसके बाह्य स्वरूप् में ही नहीं, अपितु वास्तविक सौन्दर्य का सम्बन्ध उस वस्तु में अन्तर्निहित किसी विशेषता से होता है। संगीतकला में भी ध्वनि को माध्यम के रूप में ग्रहण कर, ऐसी ही किसी विशेषता तक पहुँचा जाता हे। वह विशेषता एक ऐसा रहस्य है, जिसे सब अपनी-अपनी रीति में समझने का प्रयत्न करते है। कई इसे 'सौन्दर्य' की उपमा देते हैं, तो अन्य के लिए यह मनोरंजन का एक साधन मात्र है। कतिपय विद्वान् इसे 'रस' व 'आनन्द' के नाम से अभिहित करते हैं, जो सांसारिक विषयों से अलौकिक अवस्था में ले जाता है।

भारतीय मनीषियों ने 'रस, सौन्दर्य तथा आनन्द'' को लगभग एक ही माना है। इसलिए कलाओं से प्राप्त आनन्द को ही कलानुभूति, सौन्दर्यानुभूति अथवा रसानुभूति कहा गया। 'रस, सौन्दर्य और आनन्द- इन तीनों आप का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है। कला चाहे कोई भी क्यूँ न हो, उससे इनका अटूट सम्बन्ध है। इसी कारण सम्भवतः 'रस-सौन्दर्य' और 'रस-आनन्द'-ये पर्यायवाची कहे जा सकते हैं। ''कला और सौन्दर्य में अभिन्न सम्बन्ध है। यदि यह कहा जाए कि सौन्दर्य के सूत्र में ही कला के मोती पिरोये जाते हैं, तो अत्युक्ति न होगी। सौन्दर्य, प्रत्येक प्रकार की कला में निहित रहकर, उसके विविध रूपों का समन्वय करता है। फिर यह कला चाहे काव्य-कला हो या संगीतकला, चित्रकला हो या मूर्तिकला, वादनकला हो या नृत्यकला। कला के अन्र्तदर्शन में ही सौन्दर्य है और सौन्दर्य के अन्र्तदर्शन में कला।''

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 01, January-June, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

इस सन्दर्भ में प्रसिद्ध गायक स्व0 कुमार गन्धर्व की यह कल्पना सहज ही स्मरण हो जाती है जिसमें वह ''कला को एक अबोध शिशु के समान देखते है, जिसका अपना निश्छल, पवित्र सौन्दर्य है। उसे जिस प्रकार के वस्त्र पहना दें, वैसा ही उसका सौन्दर्य निखर जाता है। मिट्टी में लिपटकर, भोला शिशु गंदा भी हो जाता है, उसी प्रकार कलाकार भी कलारूपी अबोध शिशु को विकृति प्रदान कर सकता है।'' कहने का अभिप्राय यह है कि कला में सौन्दर्योत्पत्ति दायित्त्व कलाकार पर ही निर्भर करता है। ''कलाकार का लक्ष्य जीवन की कुरूपता तथा सौन्दर्य, दुर्बलता तथा शक्ति, पूर्णता और अपूर्णता-सबकी सामंजस्यपूर्ण रागात्मक अभिव्यक्ति है और उसकी चरम सफलता जीवन तथा विश्व में छिपे हुए सत्य को सब और से स्पर्श कर लेने में निहित है।

कला के लिए सौन्दर्य का होना परमावश्यक है क्योंकि यह कला में आदि से अन्त तक विद्यमान रहती है। सौन्दर्य का सम्बन्ध मनुष्य की रागात्मक प्रवृति से माना गया है। कलाकार की सौन्दर्य-दृष्टि उदात्त एवं निर्मल होनी चाहिए। सौन्दर्य दृष्टि से परिपूर्ण कलाकार ही अनुभूतिपूर्ण एवं मनमोहक कला का सृजन करने में सक्षम रहता है। समस्त सृष्टि सौन्दर्य से परिपूर्ण है, परन्तु उसकी अनुभूति हेतु कलाकार के हृदय में शांति एवं निर्मलता का होना आवश्यक है। कहा भी गया है-

''एक से एक मनोहर दृश्य,
प्रकृति की क्रीड़ा के सब छन्द
सृष्टि में सब कुछ है अभिराम,
सभी में है उन्नति या ह्रास।
बना लो अपना हृदय प्रशान्त,
तनिक तब देखो वह सौन्दर्य।''

यदि सहृदय कलाकार के हृदय में सौन्दर्य-भावना निहित है, तो सौन्दर्य उसके गले में, उसके हाथों में, जिनके माध्यम से वह अपनी कला को प्रस्तुत करता है, सहज ही दिखाई पड़ेगा और उस कलाकार की वह सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति अन्य मनुष्यों को भी प्रसन्नतादायक प्रतीत होगी। परन्तु यदि हृदय में ही सौन्दर्य के स्थान पर शून्य होगा, तो ऐसे व्यक्ति से अन्य जन के रंजन एवं प्रसन्नता की अपेक्षा करना ही व्यर्थ है। सर्वप्रथम, कलाकार के मन में सौन्दर्य की प्रतिस्थापना होनी चाहिए, तभी वह किसी अन्य जन को अपनी संगीत कला के माध्यम से सुख की अनुभूति करवा सकता है। कलाकार की साधना-शक्ति एवं उसका हृदय - यही दोनो तत्त्व किसी भी कला की उत्कृष्टता के दो आधारभूत स्तम्भ हैं।

जिस प्रकार प्रत्येक मानव के मस्तिष्क एवं हृदय में विभेद पाया जाता है, उसी प्रकार उसकी सौन्दर्यप्रियता की वृत्ति भी एक-दूसरे से भिन्न है। कोई मानव अधिक सौन्दर्यप्रिय होता है तो कोई कम। सौन्दर्य का मापदण्ड तथा उसकी अनुभूति की प्रक्रिया भी भिन्न-भिन्न हो सकती है। मनुष्य स्वभाव से ही सौन्दर्याेपासक प्राणी है। ज्यों-ज्यों सभ्यता और संस्कृति का विकास होता जाता है। उसकी सौन्दर्यप्रियता परिष्कृत होती जाती है। प्रत्येक मनुष्य जीवन में आनन्द की कामना करता है। वह, संगीतकला के माध्यम से आनन्द की प्रतिष्ठा कर, जीवन की अपूर्णता को पूर्णता में परिवर्तित करता है। इस कला के आस्वादन से वह अपने विषाद को विस्मृत कर, दिव्य लोक की कल्पना में निरत हो, आनन्द प्राप्त करता है। संगीत कला का कार्य मानव के लिए सत्य और सौन्दर्य की एक संजीव सृष्टि करना होता है।

कला का उद्देश्य बाह्य सौन्दर्य के अतिरिक्त, आन्तरिक सौन्दर्य का सृजन भी है। जर्मन महाकवि गेटे के अनुसारः

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 01, January-June, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

- ''सौन्दर्य को सँभालना कठिन है। वह तरल भंगुर भासात्मक छाया-सा कुछ है। वही रचना सुन्दर हो जाती है, जो अपने स्वाभाविक विकास की पराकाष्ठा पर होती है।''
- श्री रविन्द्रनाथ टैगोर ने कला में व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति पर बल देते हुए, सौन्दर्य-विधान को कला का एक साधन-मात्र माना है, साध्य नहीं।
- माघ, कला के प्रतिपल विकासमान रूप को ही सौन्दर्य की संज्ञा देते हैं:

''क्षणे-क्षणे यन्नवतां उपैति

तदैव रूपं रमणीयताया''।

सौन्दर्य का स्वरूप चाहे जैसा भी हो, परन्तु उससे आनन्द की उपलब्धि अवश्यम्भावी है। संगीतकला से जिस आनन्द की अनुभूति होती है, वह आनन्द साधारण लौकिक व्यक्तियों के आनन्द से भिन्न होता है। संगीतकला, मानव की उदात्त सौन्दर्यानुभूति का उदात्त पुनर्विधान है। यही कारण है कि कला के स्वरूप का जितना सम्यक विकास शिक्षित एवं सभ्य-सुसंस्कृत जातियों में परिलक्षित होता है, उतना असभ्य एवं पशुवृति जातियों में नहीं । किसी भी कला में कलाकार की आत्मा प्रतिष्ठित होने पर, उसमें अनिर्वचनीयता, शाश्वतता, पवित्रता, सजीवता आदि का समावेश हो जाता है, क्योंकि ये सभी गुण आत्मा में विद्यमान होते हैं। सौन्दर्य-बोध मानव का स्वाभाविक गुण है, जिसके कारण वह सुन्दरतम वस्तुओं का निर्माण करता है। कला एवं सौन्दर्य का यही सुमेल ही जीवन में नवीन आनन्द का विधान करता हैं। सौन्दर्य से परिपूर्ण संगीत कला जीवन की अस्त-व्यस्तता और अन्यमनस्कता में व्यवस्था स्थापित करती है। मानव, सुख के क्षणों में संगीतकला का आश्रय पाकर, मनमोहक एवं रमणीक रस में मग्न हो जाता है तथा दुःख के क्षणों में उसी के आश्रय से अपने हृदय को शीतलता प्रदान करता है। संगीतकला से प्राप्त आनन्द आद्यन्त आनन्द है, जो कि उसके आस्वादन का सुपरिणाम है।

सन्दर्भ

1. वाचस्पति गैरोला: भारतीय नाट्य परम्परा और अभिनय-दर्पण, पृ0-12, चैखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान दिल्ली, 1989
2. सुरेशचन्द्र त्यागीः छायावादी काव्य में सौन्दर्य दर्शन, पृ0-10, अनुराधा प्रकाशन, मेरठ, 1976
3. डा0 अनुपम महाजनः भारतीय शास्त्रीय संगीत एवं सौन्दर्य शास्त्र हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, 1993
4. डा0 मधुबाला सक्सेनाः ख्याल शैली का विकास, पृ0-255, विशाल पब्लिकेशन्ज़, कुरूक्षेत्र, 1991
5. डा0 ओंप्रकाश भारद्वाज: सौन्दर्य दृष्टि, पृ0-44 चिन्ता प्रकाशन, पिलानी (राज0), 1983
6. डा0 नगेन्द्र: भारतीय सौन्दर्यशास्त्र की भूमिका, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1981
7. डा0 मधुरलता भटनागर: भारतीय संगीत का सौन्दर्य-विधान, हिन्दी माध्यम कार्यालय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1984
8. मधुबाला सक्सेना: ख्याल शैली का सौन्दर्यशास्त्रीय विश्लेषण, संगीत (सितम्बर, 1979), पृ0-14